कर्नाटक राज्य

बनाम

मदेशा व अन्य

01 अगस्त 2007

(न्यायमुर्ति डॉ. अरिजीत पसायत और पी.सी. नावलेकर)

दण्ड संहिता 1860 धारा 106 और 201:

साक्ष्य से छेडछाड/अपराधी का प्रतिच्छादन- धारा 201 भां.द.स. की प्रयोज्यता, विनिश्चयः- अभियुक्त व्यक्ति विधिपूर्ण जमाव के सदस्य नही थे। पी.डब्ल्यू. 26 के अनुसार अभियुक्तगण ने कथित तौर पर मृतक के शरीर को जलाने के लिये फेंक दिया। पी.डब्ल्यू 26 की साक्ष्य को दोनों अधीनस्थ न्यायालयों ने ठोस व विश्वसनीय नही माना। अभियुक्त द्वारा अपराध किये जाने की ज्ञात जानकारी के अभाव में धारा 201 आकर्षित नही हुयी।

इस अपील के निर्धारण में जो प्रश्न उठे थे वे थे कि - क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 201 केवल उन्ही परिस्थितियों में लागू की जा सकती है जहॉ कोई अपराध घटित हो गया है तथा अभियुक्त ने अपराधीयों को प्रतिच्छादित करने और अधिक महत्तवपूर्ण रूप से साक्ष्य को नष्ट करने या छेडछाड करने की दिशा में कार्य किया है। और क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 201 तब लागू होगी जब अपराध का घटना स्थापित नही हुआ?

अपीलार्थी राज्य ने तर्क दिया है कि पी.डब्ल्यू. 26 की साक्ष्य यह स्थापित करती है कि अभियुक्त व्यक्तियों ए-3 और ए-4 ने मृतक के शरीर को आग में फैंक दिया और यहॉ मृतक के विरूद्ध प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग का कोई सवाल नही था और इसलिये उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता।

अपील खारिज करते हुये कोर्ट ने अभिनिर्धारित किया कि -

1.1 वर्तमान मामले में अभियुक्त को अपराध किये जाने की कोई ज्ञात जानकारी का कोई साक्ष्य रिकार्ड पर नही था इसलिये यह अभिनिर्धारित किया गया कि भां.दं.स. की धारा 201 लागू नही की जा सकती। (पैरा 5)(761 एफ जी)

वी.एल. ट्रेसा बनाम केरल राज्य (2001) 3 एससीसी 549, और सौ. विजया उर्फ बेबी बनाम महाराष्ट्र राज्य (2003) 8, एससीसी 296 पर विश्वास किया गया ।

1.2 मृतक के विरूद्ध प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार की संभावना पर भा.दं.सं. की धारा 106 में जो कुछ कहा गया है उसकी पृष्भूमि में विचार करना चाहिए। यह अभिनिर्धारित किया गया कि ए 1 से ए 5 किसी भी गैर कानूनी जमाव के सदस्य नही थे। एक विशिष्ट रूख यह था कि ए-3 और ए-4 ने मृतक के शरीर को आग में फेंक दिया था और पी.डब्ल्यू. 26 की साक्ष्य पर विश्वास किया गया था। (पैरा 9)(762-डी)

1.3 पी.डब्ल्यू. 26 जो मुख्य गवाह था उस पर विचारण न्यायालय

और उच्च न्यायालय ने विश्वास नही किया था और यह माना था कि उसकी साक्ष्य ठोस और विश्वसनीय नही थी। इसलिये विधि की स्थिति स्पष्ट करते हुये, ए3 और ए4 के द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में विशिष्ट निष्कर्षो बाबत उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने की कोई गुंजाईश नही पायी जाती है। (पैरा 10)(762-ई-एफ)

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील सं. 407/2001

कर्नाटक उच्च न्यायालय बैंगलौर की आपराधिक अपील सं. 772/1999 में निर्णय एवं आदेश दिनांक 07.02.2000 से।

संजय आर. हेगडे, अनिल मिश्रा और अमित के. चावला अपीलार्थी की ओर से ।

के. शारदा देवी उत्तरदाता की ओर से।

इस न्यायालय का निर्णय डॉ अरिजीत पसायत, जे. द्वारा सुनाया गया।

1. इस अपील में कर्नाटक उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के द्वारा उत्तरदाताओं को बरी किये जाने के आदेश को चुनौती दी गयी है।

2. इस अपील में इस न्यायालय द्वारा, भारतीय दण्ड संहिता 1860 (संक्षिप्त में आईपीसी) की धारा 201 की प्रयोज्यता तक सीमित एक नोटिस जारी किया गया था। उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 केवल उन्ही परिस्थितियों में लागू की जा सकती है जहॉ कोई अपराध घटित हुआ हो और अभियुक्त ने

अपराधियों को प्रतिच्छादित करने के लिये और अधिक महत्वपूर्ण रूप से साक्ष्य को नष्ट करने या उनके साथ छेडछाड करने की दिशा में कोई कार्य किया हो। जब कोई अपराध घटित होना स्थापित नही हुआ तो धारा 201 लागू नही होगी।

3. इस न्यायालय के पास ऐसी याचिका से निपटने का अवसर था । वीएल ट्रेसा बनाम केरल राज्य (2001) 3 एससीसी 549 में निम्न उल्लेख किया गया था:

> "9. इस प्रकार यह मुद्दा धारा 201 के तहत दोषसिद्धि पर सजा को बनाये रखने से संबंधित है, इस संबंध में कानून कलावती मामले के फैसले के बाद से अच्छी तरह से तय हो गया है जिसमें न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर अय्यर ने बैंच की ओर से कहाः "
>
> "21. मगर इसमें शायद ही कोई संदेह हो सकता है कि उसने अपने बगल में चारपाई पर लेटे अपने पति की हत्या देखी होगी । शिब्बी जो 18 फीट की दुरी पर था तलवार के हमले की आवाज से जाग गया। कलावती को हमले की शुरूआत में नही तो कम से कम हमले दौरान जाग जाना चाहिए था जबकि कई चोटें एक के बाद एक पहुचांयी गयी। जब शिब्बी जाग गया तो कलावती का बिस्तर खाली था और वह अपने पास के कमरे में पायी गयी, घटना स्थल पर नही। उसने डकैती की एक विस्तृत कहानी बतायी जिसे सच के रूप में स्वीकार नही किया जा

सकता। भले ही वह डर के मारे बिस्तर से भाग गयी हो और कुछ दुरी पर खडी हो गयी हो, उसे लगभग निश्चित रूप से पता चल गया था कि कौन अपराधी था जब तक कि उसका चेहरा ढका ना हो। जब घटना स्थल पर घटना के तुरंत बाद उपस्थित हुयी तो पहला बयान जो उसने पुलिस हैड कॉस्टेबल को दिया वह हमें लगता है कि झूठा है और हमारी राय है कि वह जानती थी या मानती थी कि यह झूठ है। अपराध के दुष्प्रेरण और अपराधी को प्रतिच्छादित करने के लिये गलत सूचना देना में इस मामले में एक बारीक सीमा रेखा है। मगर सुरक्षित पक्ष पर रहकर गलती करना और उसे केवल दण्ड संहिता की धारा 201 के तहत एक अपराध के लिये दोषी ठहराना विवेकपूर्ण है। जैसा कि विद्वान सत्र न्यायाधीश ने किया था।"

×× ×× ××

11. आईपीसी की धारा 201 इस प्रकार हैः

"201- अपराध के साक्ष्य का विलोपन या अपराधी को प्रतिच्छादित करने के लिये मिथ्या इत्तला देना - जो कोई यह जानते हुये या यह विश्वास करने का कारण रखते हुये कि कोई अपराध किया गया है उस अपराध के किये जाने के किसी साक्ष्य का विलोपन इस आशय का कारित करेगा कि अपराधी को वैध दण्ड से प्रतिच्छादित करें या उस आशय से उस अपराध से

संबंधित कोई ऐसी इत्तला देगा जिसके मिथ्या होने का उसे ज्ञान या विश्वास है,

(यदि अपराध मृत्यु दण्ड से दण्डनीय हो) यदि वह अपराध जिसके किये जाने का उसे ज्ञान या विश्वास है, मृत्यु से दण्डनीय हो तो वह दोनो में से किसी भॉति के कारावास से जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेंगी दण्डित किया जायेगा और जुर्माने से भी दण्डनीय होगा,

(यदि अपराध आजीवन कारावास से दण्डनीय हो) और अगर वह अपराध आजीवन कारावास से या ऐसे अपराध से जो दस वर्ष तक का हो सकेगा दण्डनीय हो, तो वह दोनो में से किसी भी भॉति के कारावास के जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी दण्डित किया जावेगा और जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

(यदि दस वर्ष से कम के कारावास से दण्डनीय हो) और यदि वह अपराध ऐसे कारावास से जो किसी अवधि के लिये दण्डनीय हो जो दस वर्ष तक की ना हो तो वह उस अपराध के लिये उपबंधित भॉति के कारावास से उतनी अवधि के लिये जो उस अपराध के लिये उपबंधित कारावास की दीर्घतम अवधि की एक चौथाई तक हो सकेंगी या जुर्माने से या दोनो से दण्डित किया जायेगा।

12. प्रयुक्त भाषा को ध्यान में रखने पर निम्नलिखित तथ्य

सामने आते हैः

1. अपराध का किया जाना

2. वह व्यक्ति जिसके विरूद्ध धारा 201 के तहत अपराध किये जाने का आरोप लगाया गया है उसे जानकारी या विश्वास करने का कारण होना चाहिए कि मुख्य अपराध किया गया है।

3. वह व्यक्ति जिस पर धारा 201 के तहत अपराध किये जाने का आरोप लगाया गया है के द्वारा साक्ष्य को गायब कर दिया जाना या मुख्य अपराध के बारें में मिथ्या सूचना दिया जाना चाहिए और

4. यह कार्य अपराधी को वैध दण्ड से प्रतिच्छादित करने के आशय से किया गया होना चाहिए।

×× ×× ××

14. प्रयुक्त भाषा को ध्यान में रखते हुये केवल संदेह करना पर्याप्त नही होगा। रिकार्ड पर इस बात के लिये पुख्ता साक्ष्य उपलब्ध होना चाहिए कि आरोपी ने ज्ञात या अज्ञात अपराधी को प्रतिच्छाादित करने के लिये साक्ष्य को गायब कर दिया है। सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि अभियुक्त को यह जानकारी होनी चाहिए और विश्वास करने का कारण होना चाहिए कि ऐसा कोई अपराध घटित हुआ हैं। इस दृष्टिकोण का समर्थन इस न्यायालय के अक्सर उदधृत किये जाने वाले निर्णय

पलविंदर कौर बनाम पंजाब राज्य से मिलता है । इसके अलावा रोशनलाल बनाम पंजाब राज्य में इस न्यायालय ने एआईआर के पैरा 12 में कहा है:

"(12)धारा 201 को कुछ हद तक बेपरवाह ढंग से तैयार किया गया है लेकिन हमारा मानना है कि अभिव्यक्ति "जानना या विश्वास करने का कारण रखना" और दुसरे पैरेग्राफ में "जानता है या विश्वास करता है" दोनो अभिव्यक्तियों का एक ही अर्थ में उपयोग किया गया है। अभियुक्त का मामला लेेें, जो यह विश्वास करने का कारण रखता है कि कोई अपराध घटित हुआ है यदि पहले पैरेग्राफ की दुसरी शर्ते पूरी हो गयी है तो वह धारा 201 के तहत अपराध के लिये दोषी है। यदि यह माना जायें कि शब्द "विश्वास करता है" शब्द का प्रयोग अभिव्यक्ति "विश्वास करने का कारण रखता है" से भिन्न अर्थ में किया गया था तो अपराधी को सजा देने के उद्देश्य से "विश्वास करने का कारण रखने" के अलावा "विश्वास करता है" को भी साबित करना आवश्यक होगा। हम विधायिका पर यह आरोप नही लगा सकते कि एक अभियुक्त जो पहले पैराग्राफ के तहत दोषी पाया गया है वह इसके अगले पैरेग्राफ की सजा से बच जायेगा जबतक कि कोई अतिरिक्त तथ्य या मनःस्थिति साबित न हो जाये।"

4. इस स्थिति को सौ. विजया उर्फ बैबी बनाम माहराष्ट्र राज्य

(2003) 8 एससीसी 296 में फिर से दोहराया गया है जो इस प्रकार है:

" 6. धारा 201 आईपीसी, तथ्य के बाद अभियोग के मामले को प्रस्तुत करती है। "तथ्य के बाद एक सहायक " लार्ड हेल ने कहा " कि हो सकता है कि जहॉ एक व्यक्ति यह जानता हो कि अपराध किया गया है, वह सुविधा प्राप्त करता है या सांत्वना देता है या सहायता करता है" (देखे आई डैल 618) इसलिये एक सहायक वस्तुस्थिति बनने के लिये सबसे पहले यह आवश्यक है कि उसे किये गये अपराध के बारें में पता होना चाहिए, अगले स्थान पर उसे प्राप्त करना, राहत देना, सुविधा देना या उसकी सहायता करना चाहिए और आमतौर पर किसी अपराधी को, उसकी गिरफतारी, मुकदमा चलाने में व सजा भुगतने मे रूकावट डालने, में जो भी सहायता दी जाती है वह सहायता करने वाले को सहायक बना देती है। धारा 201 के लिए आवश्यक है कि अभियुक्त का इरादा अपराधी को प्रतिच्छादित करना रहा हो। इसको अलग तरीके से कहे तो अपराधी को प्रतिच्छादित करने का इरादा अभियुक्त का प्राथमिक व एक मात्र उद्देश्य होना चाहिए। यह एक तथ्य है कि छिपाव का यह प्रभाव होने की संभावना पर्याप्त नही है। क्योकि धारा 201 इरादे को संभावना से अलग बताती है।

7. धारा 201 किसी भी व्यक्ति को दंडित करती है जो यह

जानते हुये कि कोई अपराध किया गया है अपराध के साक्ष्य को नष्ट कर देता है या अपराधी को वैध दण्ड से प्रतिच्छादित करने के लिये मिथ्या सूचना देता है, धारा 201 न्याय की प्रक्रिया को विफल करने के प्रयासों को दंडित करने के लिये बनायी गयी है।

5. हालॉकि इस मामले में अभियुक्त द्वारा अपराध किये जाने की ज्ञात जानकारी का कोई साक्ष्य रिकार्ड पर नही था इसलिये यह विनिश्चित किया गया कि धारा 201 आईपीसी को लागू नही किया जा सकता।

6. राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया है कि पी.डब्ल्यू 26 के साक्ष्य से यह स्थापित होता है कि अभियुक्त व्यक्तियों ए 3 और ए 4 ने मृतक के शरीर को आग में फैंक दिया था। यह तर्क दिया है कि मृतक के खिलाफ प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने का कोई सवाल नही है और इसलिये उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश बरकरार नही रखा जा सकता है।

7. दुसरी ओर उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने बरी करने के आदेश का समर्थन किया।

8. इस सवाल पर आते हुये कि क्या प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग से संबंधित दलील मृत व्यक्ति के विरूद्ध उपलब्ध करायी जा सकती है जिसकी विवाद में कोई भूमिका नही थी। आईपीसी की धारा 106 के प्रावधानों पर ध्यान देने की जरूरत है जिसे निम्नानुसार पढा जाता है

“106 घातक हमले के विरूद्ध प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार

जबकि निर्दोष को अपहानि का जोखिम हो - जिस हमले से मृत्यु की आंशका युक्तियुक्त रूप से कारित होती है उसके विरूद्ध प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने में यदि प्रतिरक्षक ऐसी स्थिति में हो कि निर्दोष व्यक्ति की अपहानि के जोखिम के बिना वह उस अधिकार का प्रयोग कार्यसाधक रूप से न कर सकता हो तो उसके प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विस्तार वह जोखिम उठाने तक है।"

9. इसलिये मृतक के विरूद्ध प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार की संभावना पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 106 में वर्णित बातों की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए। यह माना गया है कि अभियुक्त ए 1 से ए 5 किसी विधि विरूद्ध जमाव के सदस्य नही थे। एक विशिष्ट रूख यह था कि अभियुक्त ए 3 व ए 4 ने मृतक के शरीर को आग में फेंक दिया था और पी0 डब्ल्यू 26 की साक्ष्य पर विश्वास किया गया ।

10. इस पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि इस बात पर कोई विवाद नही हो सकता कि धारा 201 लागू होगी भले ही मुख्य अपराध स्थापित नही किया गया हो। जैसा कि वी.एल. ट्रेसा और सौ. विजया मामले में कहा गया है। पी.डब्ल्यू. 26 जो मुख्य गवाह था जिस पर विचारण न्यायालय व उच्च न्यायालय ने विश्वास नही किया और यह माना गया कि उसकी साक्ष्य ठोस और विश्वसनीय नहीं थी। इसलिये कानून की स्थिति को स्पष्ट

करते हुयेर; ए-3 व ए-4 के द्वारा निभाई गयी भूमिका के संबंध में निकाले गयें विशिष्ट निष्कर्षो के मद्देनजर हम उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने की कोई गुंजाइश नही पाते हैं।

11. अपील विफल और खारिज की जाती हैं ।

एस.के.एस.

अपील खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी जाकिर हुसैन (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।